मो रं गे

जुलाई–अगस्त 2023

इस बार

खिड़की
जंगल में बारिश

गीत-कविताएं
चिड़िया
घर का आसामन
कीड़ा कीड़ी
बाघ
फुटबॉल
ऊँची नीची है डगरिया

कहानियाँ
सियार का सलाहकार
चार आलसी

याद की धूप-छाँव में
पानी पर झगड़ा न हो जाए
स्कूल के पास बाघिन

शिक्षा के ग्रामीण केन्द्र की ओर
सोचेंगे कि आगे क्या करना है
ये भी कोई स्कूल है
टापरी में तोमोए

बात लै चीत लै
जाल

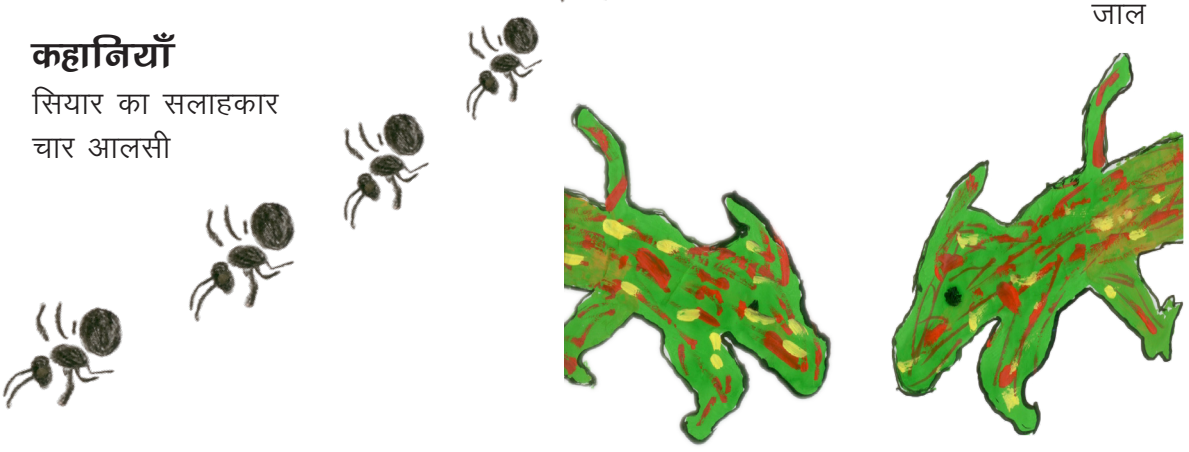

सम्पादन : प्रभात
डिज़ाइन : खुशी
आवरण पर माँडना मदन मीणा के सौजन्य से
वितरण : लोकेश राठौर
वर्ष 14 अंक 155–156
' मोरंगे' का प्रकाशन 'यात्रा फाउण्डेशन' आस्ट्रेलिया, के वित्तीय सहयोग से हो रहा है।

प्रबंधन
विष्णु गोपाल,
निदेशक
ग्रामीण शिक्षा केन्द्र

पत्रिका का पता
मोरंगे
ग्रामीण शिक्षा केन्द्र
H-1, फर्स्ट फ्लोर, राजनगर,
मानटाउन, सवाईमाधोपुर
राजस्थान
322001

yatra foundation

जंगल में बारिश

मैं जब छोटा था, एक बार माँ ने कुकुरमुत्ते बटोरने के वास्ते मुझे जंगल में भेजा। मैने जंगल में खूब सारे कुकुरमुत्ते बटोरे और घर लौटने को हुआ। एकाएक अँधेरा छा गया, बादल गरजने लगे और वर्षा होने लगी। मैं डर गया और एक बड़े से बलूत के पेड़ के नीचे बैठ गया।

तभी इतने जोर से बिजली चमकी कि आँखे दुखने लगी और मैने उन्हें मीच लिया। मेरे सिर के ऊपर कुछ तड़कने और कड़कने की आवाज हुई और फिर कोई चीज आकर जोर से मेरे सिर से टकराती। मैं जमीन पर गिर पड़ा और तब तक वहाँ पड़ा रहा, जब तक वषा बंद न हो गयी।

जब मुझे होश आया, सारे जंगल में पेड़ों से पानी टपक रहा था, चिड़ियाँ गा रही थी और धूप निकल आयी थी। बड़ा बलूत टूट गया था और उसके ठूँठ से धुँआ उठ रहा था। मेरे चारों और बलूत की खपचियाँ बिखरी पड़ी थी। मेरी सारी कमीज गीली हो गयी और शरीर से चिपकी हुई थी। सिर पर गुमटा निकल आया था और थोड़ा सा दर्द हो रहा था।

मैने अपनी टोपी और कुकुरमुत्तों की टोकरी उठायी और भागा–भागा घर पहुँचा। घर में कोई नहीं था। मैंने मेज से रोटी का टुकड़ा उठाकर खाया और अँगीठी के ऊपर जाकर सो गया।

जब जागा, तो देखा कि मेरे लाये हुए कुकुरमुत्ते पका लिये गये हैं, मेज पर रखे हुए हैं और सब खाने बैठ गये हैं।

मैं चिल्लाया, ''मेरे बिना क्यों खा रहे हो?''

उन्होंने जवाब दिया, '' तो सो क्यों रहे हो, आओ, तुम भी खाओ।''

लियो टॉल्सटॉय

खिड़की

सुमन, खुशबू समूह

गीत कविताएँ

शिवानी, रंगोली समूह

चिड़िया

ज्वार बाजरे के खेतों में
चुगती रहती दाना
चींचीं चींचीं करती रहती
गाती रहती गाना

रामभजन योगी, शिक्षक, गिर्राजपुरा।

घर का आसमान

पापा मेरा सूरज जैसा
मम्मी मेरी चाँद सी
भाई मेरा तारा जैसा
बहन हवा की तान सी
सोच सोच कर हूं हैरान
ये घर है कि आसामन

ब्रजेश, उदय पाठशाला, फरिया।

बाघ

देखा एक दोपहर
भारी भारी पैर
बड़ी बड़ी थी आँख
पैने पैने दाँत
सूखा मेरा खून
दिखे जब चाकू से नाखून

मनीषा बैरवा, शिक्षिका, कटार।

कमलेश, बोदल

कीड़ा कीड़ी

एक था कीड़ा
एक थी कीड़ी
चूल्हे में थी
लकड़ी सीड़ी

निकल रहा था धुँआ
कीड़ा बोला ये क्या हुआ

कीड़ी बोली
फायर ब्रिगेड बुलाओ
कीड़ा बोला
नहीं मोटर चलाओ

आशा यादव, शिक्षिका, जगनपुरा।

फुटबॉल

खेलते कूदते मैदान में आए हैं
दूर दूर से हमारे मैदान में खेलने आए हैं
सब बच्चे ताकत लगाकर खेल रहे हैं
मकसद है उनका जीतने आए हैं
सब देख रहे हैं उनको बड़े ध्यान से
जब भी गोल होता
तालियों की गड़गड़ाहट होती
किक मारते हैं बड़े बड़े
आश्चर्य से देखते लोग उनको
बड़े ध्यान से खेलते वो
जब भी बॉल दूसरी टीम के पास जाती
उस पर टूट पड़ते वो
जैसे कोई पहाड़ गिरता
जब भी सीटी बजती
फुटबॉल जगह पर छोड़ देते वो
सवधानी रखते कदम कदम पर वो

भारती माली, कक्षा-6, हरियाली समूह, उदय पाठशाला, फरिया।

टाईगर मीना, दीप समूह

पहेली

कम पानी में पैदा होता
स्वाद मेरा मीठा होता
पाताल में पैर मेरे
आकाश में सिर
जल्दी से जवाब दो
मौका न मिलेगा फिर

भोला शंकर रैगर, शिक्षक-जगनपुरा।

सोनू, झिलमिल समूह

मुरारीलाल

कहानियाँ

सियार का सलाहकार

एक बार एक जंगल में एक सियार था। उसे अपने काम में मदद के लिए एक सलाहकार की जरूरत थी। उसने अपने आसपास के सभी जानवरों को इकट्ठा किया। फिर उनसे पूछा–'आपको पता होगा, मैंने आपको क्यों इकट्ठा किया है?'

सभी जानवरों ने मना कर दिया।

सियार ने कहा–'मुझे एक सलाहकार की जरूरत है।'

नेवले ने कहा–'मैं साँप से नहीं डरता। मुझे आप अपना सलाहकार बना लीजिए।'

बिल्ली बोली–'मैं शेरों के कुनबे से हूँ। मुझे आप अपना सलाहकार बना लीजिए।'

खरगोश ने कहा–'मैं बुद्धिमान हूँ। मुझे आप अपना सलाहकार बना लीजिए।'

सियार ने कहा–'जो मेरे सवाल का सही जवाब देगा। वही मेरा सलाहकार बनेगा। मेरा सवाल ये है कि आसमान में मुर्गा उड़ रहा हैं। नीचे बहुत बड़ा समुद्र है। उसका अण्डा कहाँ गिरेगा?'

नेवला कहता है–'सीधी सी बात है। नीचे समुद्र है तो समुद्र में ही गिरेगा।'

बिल्ली भी यही जवाब देती है। लेकिन खरगोश अलग जवाब देता है। वह कहता है–'आप हमें पागल बनाते हो। मुर्गा कब से अण्डे देने लग गया।'

सियार ने कहा–'तुम्हारी सूझबूझ की मैं दाद देता हूँ। तुम ही आज से मेरे सलाहकार हो।'

अभिषेक गुर्जर, कक्षा–7, उदय सामुदायिक पाठशाला, गिर्राजपुरा।

सुरेन्द्र, रिमझिम समूह

ज्योति सैनी, जगनपुरा

चार आलसी

एक बार चार आलसी दोस्त साथ में बैठकर खाना खा रहे थे। उन्होंने जैसे ही खाना खाया तो उसमें नमक बहुत कम था। सभी बोले कि भाईयो! सब्जी में तो नमक बहुत ही कम है। अब बात आई लेकर कौन आयेगा, क्योंकि वे चारों आलसी थे। तभी एक दोस्त के दिमाग में आइडिया आया। उसने कहा कि जो सबसे पहले बोलेगा वो ही नमक लेकर आयेगा। यह बात सभी के जँच गई। अब सब अपना मुँह बंद करके बैठ गये। उन्हें रात हो गई तो सो गये पर कोई भी नहीं बोला। इस तरह उन्हें तीन–चार दिन बीत गये पर कोई नहीं बोला। भूख के मारे उनकी हालत खराब हो गई और वे बेहोश हो गये। जब वे अपने कमरे से बाहर नहीं निकले तो गाँव वालों को शक हो गया। गाँव वाले दरवाजा तोड़कर अंदर गये तो उन्हें लगा कि ये तो मर गये। गाँव वालों ने उन्ह. ले जाने के लिए अर्थी तैयार की। जैसे ही पहले व्यक्ति को अर्थी पर लेटाया तो वो बोल उठा कि मैं तो जिंदा हूँ। फिर बाकी तीनों दोस्त भी एक साथ बोले–'अब तू जा और नमक लेकर आ।'

फतेहसिंह गुर्जर, कक्षा–6, उदय सामुदायिक पाठशाला गिरिराजपुरा।

सोनू, कदम समूह

याद की धूप छाँव में

स्कूल के पास बाघिन

हमारे स्कूल के आसपास बाघिन घूम रही थी। उसके साथ दो बाघ शावक भी थे। हमको पता नहीं था वह कब आई। स्कूल से दो सौ मीटर दूर तलायी थी। उसे पीने के पानी की कोई चिन्ता नहीं थी। तलायी पर उसने गाय का शिकार किया। अब वो वहीं रहने लगी। यह तलायी हमारी स्कूल के पीछे की तरफ थी और उसी तरफ थोड़ी ही दूरी पर कटार गाँव है। कटार से पचास साठ बच्चे स्कूल में पढ़ने आते हैं। पढ़ने के बाद हम घर जाने ही वाले थे कि वन विभाग की गाड़ी आयी। उसमें चार पाँच आदमी बैठे थे। उन्होंने गाड़ी से उतर कर कहा कि हम तलायी पर बाघिन को देखकर आए हैं। इसलिए तुम कोई भी आगे पीछे घर मत जाना। सब साथ जाना।

घर पर पापा ने कहा कि जब तक बाघिन का हल्ला मचा हुआ है, तब तक स्कूल मत जाओ। लेकिन हमारे गुरूजी हमें लेने के लिए आ गए। अब हम गुरूजी के साथ स्कूल आने जाने लगे। सारे बच्चे हल्ला मचाते हुए और गीत गाते हुए जाते। ताकि बाघिन हमारे पास न आए।

शांति मैडम फरिया के बच्चों को गाँव में पढ़ाने लगी क्योंकि वे जिस रास्ते से आती थी, उसी में बाघिन बैठी थी।

अगले दिन वन विभाग वाले फिर गाड़ी में आए। उन्होंने पूछा–'तुमने बाघ देखा है?' हमने मना कर दिया। तब उन्होंने बताया–'तुम्हारे स्कूल के पीछे जो झाड़ियाँ हैं। अब बाघिन वहाँ है। तुम लोग खाड़ (बरसाती नाला) के रास्ते नहीं जाना। दूसरे रास्ते से जाना। हमने दूसरे रास्ते से जाना शुरू कर दिया।

फिर वन विभाग की गाड़ी आने लगी। सारे बच्चे वन विभाग की गाड़ी में बैठकर स्कूल जाते और उसी में बैठकर पढ़ाई करके वापस घर आते।

फिर एक दिन तलायी और खाड़ के आसपास जेसीबी चलाकर शोर मचाया गया। फिर हमने सुना कि बाघिन अपने बच्चों के साथ जंगल की ओर चली गई।

हमें लाने और ले जाने वाली वन विभाग की गाड़ी भी आना बंद हो गई। उस गाड़ी से स्कूल आने जाने में मौज आती थी।

(आरती नायक, मनीष बैरवा, दिलखुश बैरवा कक्षा–6, 7, 8 हरियाली समूह, फरिया के बच्चों के लिखे अनुभवों पर आधारित।)

पानी पर झगड़ा न हो जाए

कल हमारी छुट्टी थी। हमारे गाँव में बिजली के तार टूट गए इसलिए लाइट नहीं आ रही थी। गाँव वाले पीने के पानी और नहाने के लिए तड़प रहे थे। मेरे मन में ये आ रहा था कि पानी भरने और नहाने कहाँ जाऊँ। फिर हम कुछ लड़के मिलकर दूर एक टंकी पर नहाने गए। मुझे गुस्सा आ रहा था कि नहाने के लिए इतना दूर पैदल चलना पड़ रहा है। हम नहाकर वापस लौटे तो देखा लोग बिजली के तारों को जोड़ रहे थे। मैंने सोचा कि यार थोड़ी देर में बिजली आ जाती, खाँमाखाँ इतनी दूर पैदल गए। फिर लाइट आयी तो लोग टंकी को भरने लगे। मैंने टंकी पर जाकर देखा तो बहुत सारी औरतें पानी भरने आई थीं। वहाँ बहुत सारे आदमी और औरतें नहाने आ गए। पानी भरने का किसी का नम्बर नहीं आ रहा था। वहाँ के माहौल को देखकर मैंने सोचा कहीं झगड़ा न हो जाए।
मैंने सोचा अच्छा हुआ जो दूर टंकी पर नहाकर आ गया। यहाँ तो नहाने का नम्बर ही नहीं आता। फिर मैं अपने घर गया और कमरे में पंखा चलाकर सो गया।

अजय नायक, उदय सामुदायिक पाठशाला, फरिया।

रोशन, फूल समूह

शिक्षा के ग्रामीण केन्द्र की ओर

सोचेंगे कि आगे क्या करना है

ग्रामीण शिक्षा केन्द्र में आने से पहले, मैं चारेक साल से बोध शिक्षा समिति के शिक्षक पहल कार्यक्रम में काम कर रहा था। यह काम मैं अलवर जिले के उमरैण ब्लॉक के रूँध बीणक गाँव में कर रहा था। यह गाँव सरिस्का वन्यजीव अभयारण्य में था। चारों तरफ पहाड़ों से घिरा, जंगल के बीच बसा यह गाँव था। यहाँ से सडक पर आने के लिए चारेक किलोमीटर पैदल चलना ही होता था। उसके बाद एक खटारा बस मिलती थी जो कायदे कानूनों से बेपरवाह बेखौफ थी और एक दिन में दो फेरे लगाती थी। यह खटारा बस जंगल में बसे गाँव के देस–दुनिया और बाजार से जुडने का जरिया भी थी। रूँध बीणक गाँव में दूकान, दवाखाना, स्कूल, रास्ते जैसी कोई चीज नहीं थी। दुनिया की तरक्की से अनजान, निरक्षर किन्तु प्रकृती से जुड़े सहज सरल और आत्मीयता से भरे लोगों ने मेरे जैसे शहरी व्यक्ति को यादगार जमीनी अनुभव दिए।

बोध शिक्षा समिति के अनुभवों के किनारे चलते हुए 14 जून 2004 को ग्रामीण शिक्षा केन्द्र, सवाई माधोपुर पहुँच गया। बस में लगातार सात घण्टे का सफर बहुत दूर आ जाने का अहसास दिला रहा था। पीछे छूट चुके बूढ़े माता–पिता, मेरी जीवन साथी और चार साल से भी कम उम्र के मेरे दो बच्चे। घर की यादों से भरी उस दोपहर में मैं अपने परिचित मनीष पाण्डे से उनके घर पर मिला। वे मुझसे कुछ ही महीने पहले यहाँ आए थे।

अगले दिन जब बाते करते हुए हम कार्यक्षेत्र में गये तो मैने उनसे पूछा, ''बच्चे कहाँ है?''

मनीष–''बच्चे गाँव में है।''

''स्कूल कहाँ है?'' मैने फिर पूछा।

''अब तुम आ गये हो तो स्कूल भी खुल जाएगा।'' मुझे ऐसे जवाब की अपेक्षा नहीं थी।

नंदनी, शेरपुर

मैने एक बार फिर पूछा, ''ऑफिस भी है या फिर वो भी खुल जाएगा?''
उसने कहा ''अभी मैं घर से काम कर रहा हूँ।'' अब पैसा बजट जैसे सवालों का कोई मतलब नहीं था। बात समझ में आ चुकी थी। सब कुछ हमें ही शुरू से शुरू करना था।
घर से आते वक्त मेरी मौसी ने कहा था, ''बाप तो मरने को तैयार है और ये घर छोडकर जा रहा है।''
जीजा जी ने एक बात कही, ''घर से दूर काम करना आसान नहीं होता है। जाने दो जल्दी वापस आ जाएगा।'' मेरे मन में भी इस विचार ने हल्की सी हलचल मचाई। इससे बचने के लिए मैने बाबर की युद्ध नीती का अनुसरण किया। जो अपनी सेना के डर कर भागने के सारे रास्ते काट देता था। जिसकी वजह से सेना के पास दो ही विकल्प होते थे। लड़कर जीतना या बिना लड़े मरना। मैं भी अपनी पुरानी नौकरी छोडकर आया था और असफलता के साथ वापस जाने का मतलब होता फिर कभी हिम्मत नहीं जुटा पाना।
तो इस तरह पहले दिन एक वादा खुद से किया। एक साल सब कुछ लगाकर काम करते है। कामयाबी मिली तो ठीक नहीं तो फिर सोचेंगे कि आगे क्या करना है।

विष्णु गोपाल

अच्छा, यह भी स्कूल है!

एनजीओ, यह शब्द मैंने पहली बार 2009 में सुना था। तब, जब ग्रामीण शिक्षा केन्द्र, सवाईमाधोपुर में काम करने का अवसर मिला। इन्टरव्यू देने के बाद हमारे उस वक्त के संस्था प्रधान मनीष पाण्डेय जी ने कहा कि आप जाकर पहले स्कूल देख लो, उसके बाद बताना। अगले दिन मैं जगनपुरा स्कूल जाने के लिए रवाना हुई। मैं रास्ते में सोच रही थी–'पढ़ाने में कौनसी बड़ी बात है। बच्चे थोड़ी उधमबाजी करते हैं, पर उसमें क्या है, दो–पाँच डण्डे दिये और सब चुप। इस स्कूल की छवि मेरे दिमाग में प्राइवेट स्कूल के जैसी ही थी। जब मैं जगनपुरा स्कूल में पहुँची तो सारे बच्चे मुझे बाहर नजर आये। जिनमें कुछ बच्चे चित्र बना रहे थे, तो कुछ बच्चे खेल रहे थे। कुछ बच्चे गीत–कविता गा रहे थे और कुछ बच्चे मिट्टी के खिलौने बना रहे थे। वहाँ मैं रंजीता जी से मिली। उन्हें मेरे बारे में पहले से ही पता था। कुछ देर बाद मैंने उनसे पूछा–'स्कूल कहाँ है?'

उन्होंने कहा–'स्कूल यहीं है।'

मैंने कहा–'तो क्या लंच हो रहा है?'

उन्होंने कहा–'नहीं! बच्चे कला कार्य कर रहे हैं।'

मेरी उलझन और बढ़ गई। मैंने फिर कहा–'क्या बच्चों का मेला लग रहा है?'

उन्होंने हँसते हुए कहा–'नहीं! आज की योजना पर कार्य हो रहा है।'

अब ये एक और नया शब्द आ गया–'योजना'। ये क्या होती है? मुझे ये भी नहीं पता था कि ये होती है या होता है। फिर मैंने उनसे कहा कि मैं क्लास देख लेती हूँ और जाकर क्लास देखने लगी तो देखा कि न तो बैग है, न बच्चों के पास किताबें और न ही कोई अन्य शिक्षण सामग्री।

बच्चे कंकर, तीलियों और कार्ड से सवाल हल करने में लगे थे। अब मुझसे रहा नहीं गया और मैंने पूछा–'दीदी! यह प्राइवेट स्कूल ही है ना?'
उन्होंने ना में गर्दन हिलायी।
मैं उनसे कुछ और पूछ ही रही थी कि कुछ बच्चे उनसे बोले–'रंजीता इधर आ!'
कुछ और बच्चे बोले–'रंजीता पहले मेरा काम देख। रंजीता पहले मेरा।'
रंजीता जी उन बच्चों के साथ व्यस्त हो गई। मैं सोच रही थी, 'यह कोई मैडम है या कामवाली!'
कुछ बच्चे उनके आस–पास चढ़े हुए थे। मैं यही सोच रही थी कि इन्हें थप्पड़ देकर क्यूँ चुपचाप नहीं बैठा रही। बच्चों का इतना शोर–शराबा मैंने पहली बार सुना था। थोड़ी देर बाद ही मेरा सिर, दर्द से फटने लगा और मैं क्लास से बाहर आ गई।
बाहर देखा कुछ बच्चे मिट्टी के खिलौने बना रहे थे। एक व्यक्ति उनको मिट्टी तैयार करके दे रहा था। मैं उन्हें भी कामवाला ही समझ रही थी। बाद में मुझे पता चला कि वे शिक्षक हैं और उनका नाम रामसिंह है। मैंने सोचा इन्हीं से पूछ लेती हूँ। यह सरकारी स्कूल है या प्राइवेट स्कूल है? इस पर रामसिंह जी ने कहा कि यह उदय सामुदायिक पाठशाला है। यह न तो प्राइवेट है अैर न ही सरकारी। अब मैं और ज्यादा परेशान हो गई, स्कूल की ये तीसरी वैरायटी क्या है भई? कहाँ से आ गई? मैंने उनसे यहाँ से सवाईमाधोपुर जाने वाली बस का समय पूछा और वहाँ से निकल गई।
पूरे रास्ते यही सोचती रही–'क्या यह वास्तव में कोई स्कूल ही है? कहीं ऐसा तो नहीं मुझे किसी और जगह जाना था और मैं यहाँ आ गई।

सपना राजावत, शिक्षिका,श्यामपुरा।

टापरी का तोमोए

मैं ग्रामीण शिक्षा केन्द्र से 2009 में जुड़ा। गर्मियों के दिन थे। प्रशिक्षण के बाद हम पाँच शिक्षकों को फरिया गाँव के स्कूल में भेजा गया। हम सभी इस गाँव से अनजान थे लेकिन बस से उतरते ही शाला सहायक बद्रीजी हमें सड़क पर मिल गए। अब वे हमें स्कूल की ओर ले जा रहे थे। सड़क से उतरकर वे हमें जंगली बबूलों में इधर–उधर पैदल ले जा रहे थे। चलते–चलते बहुत देर होने पर, मैं सोच रह था कि ये हमें जंगल में क्यों ले जा रहे है? लेकिन हम सब बिना बात किये उसके पीछे–पीछे चले जा रहे थे। थोड़ी और दूर चलने के बाद वह जगह आई जहाँ पाँच टापरियाँ बनी हुई थी। टापरियों को दिखाते हुए उसने कहा–'यह रहा हमारा स्कूल।'

मैंने उस उजाड़ जगह को गौर से देखते हुए पूछा–'यह है हमारा स्कूल? यहाँ पढ़ाएँगे हम?'

'हाँ जी।' शाला सहायक बद्रीजी ने कहा।

प्रशिक्षण में तोत्तोचान किताब में तोत्तोचान के स्कूल के बारे में पढ़ा था। वह दृश्य साफ–साफ दिखने लगा। यहाँ न तो बिजली है, न ही पानी, न ही आस–पास कोई गाँव, न ही कोई मकान या दुकान। यहाँ बच्चे कैसे व किधर से आयेंगे क्योंकि यहाँ से तो आसपास कोई गाँव दिखाई ही नहीं दे रहा है।

जंगली कीकर बबूल और दूसरे पेड़ हैं और सूखे बंजर पड़े खेत हैं। खैर हम पाँच शिक्षक वहाँ जाकर बैठते हैं। बद्री हमें पानी पिलाते है और पूछते हैं–'चाय?'

हमने चारों ओर सुनसान में दूर दूर तक नजर दौड़ाते हुए आश्चर्य से पूछा–'चाय कहाँ से मिलेगी?'

बद्रीजी बोले–'अभी बनाते हैं।'

उन्होंने तीन पत्थर रखे, सूखी घासफूस का कूड़ा इकट्ठा किया। आग जलायी। एक टपरी में से सामान लाए, धीरे–धीरे चाय बनना शुरू हो गई। हमें चाय मिलती है। थोड़ी राहत मिलती है। बद्री हमें वहाँ की स्थिति, गाँव का माहौल, स्कूल आगे कैसे चलेगा, बच्चे, कहाँ–कहाँ से बच्चे आ सकते आदि बातें बताते हैं। हम पाँच में से दो शिक्षक अनुभवी हैं। उनमें एक विजय सिंह को बोध शिक्षा समिति, जयपुर में काम का अनुभव था। और एक रंजीता जी को बोध के अलावा यहाँ भी काम का अनुभव था। वही हमारी कॉर्डिनेटर भी थीं। बाकी हम तीन शिक्षक नितांत नये थे। बातचीत करते–करते दोपहर हो गई। भूख लगने लगी। बद्रीजी बोले–'भूख लगने लगी है क्या?'

'भूख तो लग रही है। यहाँ आस–पास कुछ खाने को मिलेगा?'

'नहीं जी, यहाँ तो कुछ भी नहीं है। फरिया गाँव में जाना पड़ेगा।'

'क्या आप जा सकते हैं फरिया गाँव।' 'हाँ! चला जाता हूँ।' कहते हुए बद्रीजी साइकिल उठाते हैं और थोड़ी देर में बिस्कुट और नमकीन लेकर आते हैं। भूख से थोड़ी राहत मिलती है। हम थोड़ा आराम करते हैं। अगले दिन के काम की योजना बनाते हैं कि कल कौनसे गाँव में सम्पर्क करेंगे। इतना करने के बाद अब रात के खाने व सोने की चिंता होने लगी।

'खाना कहाँ मिलेगा व सोयेंगे कहाँ?'

बद्री बोले–'मैडम जी(रंजीता जी और रेणु जी) तो दोनों राधेश्याम जी के घर फरिया में चली जायेंगी और हम लोग यहीं पर सोयेंगे। (मैं अशोक, विजय सिंह जी और दिनेश शुक्ला जी।)'
मैंने कहा–'यहाँ पर सोने की जगह कहाँ है?'
बद्रीजी बोले–'सब व्यवस्था कर लेंगे। चलो अभी तो खाने की व्यवस्था करते हैं।'
बद्रीजी अपने घर गए और आटा, दाल लेकर आए। तीन पत्थरों के चूल्हे पर सब्जी व दूसरे तीन पत्थरों के चूल्हे पर तवा रखकर रोटियाँ सेकी गई। शायद चूल्हे पर खाना बनाने का किसी को अनुभव नहीं था। इसीलिए कभी आग तेज हो जाती कभी बिल्कुल बुझ ही जाती थी। रोटियाँ भी जल–जल कर अपना रूप बदल चुकी थी। रोटियों पर पापड़ी तो आती ही नहीं थी, यानी रोटियों से फूलने की गलती तो भूल से भी नहीं हो रही थी। फिर भी कोई रोटी फूलने की जुर्रत करती तो तुरंत ही जल भी जाती। जलने के बाद तो फूलने का सवाल ही नहीं था। लेकिन जब एक समय खाना भी नसीब बड़ी मुश्किल से हो रहा है तो ये जली रोटियाँ किसको दिखती थी। भूख के मारे हम सभी को मोटी–मोटी रोटियाँ बिना किसी संकोच के स्वादिष्ट लग रही थी। अगर ये ही रोटियाँ घर पर जलती तो कई नखरे तो खाने से पहले ही हो रहे होते। लेकिन आज खुद का बनाया भोजन भूख के मारे स्वादिष्ट लग रहा था।
बर्तनों की संख्या भी ज्यादा नहीं थी। जो भी है, जैसा भी है। भूख मिट गई थी अब आराम की जरूरत थी।
सूरज छिपने जा रहा था। चारों ओर शांति छायी थी। धीरे–धीरे अँधेरा होता हुआ दिख रहा था। सुनासन इलाका था आस–पास कोई गाँव नहीं दिखता था। मेरे मन में चिंता भी थी कि अगर यहाँ कुछ भी हो जाता है तो क्या कर सकते हैं। जैसे कोई मेडिकल इमरजेंसी हो जाए या कोई गैंग आ जाए।
सामने रणथम्भौर अभयारण्य से किसी जानवर के चले आने की आशंका की तो कही ही क्या जाए।
'आ जाये तो क्या किया जा सकता है?' मैंने बद्रीजी से पूछा। 'क्या आप यहाँ रात को सोते हैं?'
बद्रीजी बोले–'हाँ, रोजाना ही सोता हूँ'
'डर नहीं लगता?'
'पहले तो लगता था लेकिन अब तो नहीं लगता।'
'आप क्या–क्या रखते हो। अगर कुछ आ जाये तो?'
'कुल्हाड़ी व डंडे हैं। लेकिन यहाँ ऐसा कोई डर नहीं है आप तो आराम से सो जाओ।'
'सोने के बिस्तर?'
एक टापरी में सोने के बिस्तर लगाये जाते हैं। बिस्तर में, एक बक्से पर चटाई बिछाई जाती है और एक चटाई टापरी में नीचे। ओढ़ने के लिए दो–तीन नई चटाइयाँ रखी जाती हैं। बरसात का मौसम था। उसम हो रही थी। धीरे–धीरे बूँदा–बाँदी शुरू हो गई थी। टापरी के अंदर सोना मजबूरी थी। अँधेरा हो चुका था। उजाले के लिए लालटेन थी। उसको भी ज्यादा देर नहीं जला सकते थे क्योंकि कीड़े आ रहे थे। साथ ही साथ आवाज आ रही थी। हम लेटे हुए थे और इधर–उधर की बातें कर रहे थे। हम तीन नये लोगों को तो नींद नहीं आ रही थी।

दो नीचे सो रहे थे। दो शिक्षक ढाई गुणा चार के बक्से पर सो रहे थे। जिसमें पूरे पैर भी नहीं पसर रहे थे। सो क्या रहे थे लेट ही रहे थे। नींद तो कैसे आती। एक तो चारों ओर अँधेरा, जंगल, डर का माहौल। साथ ही अंदर टापरी में मच्छरों का आतंक। जिससे हाथ व पैर तो लगातार चल ही रहे थे। मच्छरों से बचाव के लिए ओढ़ने की कोशश की जाती। एक चटाई को ओढ़ा जाता लेकिन अब चटाई ओढ़ने में कैसे आये। नई चटाइयाँ थी। एकदम टाइट स्थिति में जैसे गुस्सा दिखा रही हो। ऊपर से उमस, ओढ़ते हैं तो गर्मी लगती है। चटाइयों को हटा. कर वापस रख दिया। अकेले बाहर घूमने की हिम्मत भी नहीं कर सकते थे। सारी रात इसी तरह निकल गई। सुबह बिना सोये ही उठ गये। दिन की शुरूआत हो चुकी थी। लेकिन हमारी शुरूआत होना बाकी थी। नहायेंगे कहाँ, ब्रश करना, अब यह चिंतायें थी। बद्रीजी से पूछा–'नहाना कहाँ होगा?'

बोले–'गाँव में जाकर ही नहा सकते हैं। आस–पास तो कुछ भी नहीं हैं।'

अब नहाना तो रद्द हो चुका था। बिना खाना खाये व बिना नहाये ही हमें समुदाय सम्पर्क के लिए जाना था। हम निकल लिये फरिया की ओर। शायद खाना समुदाय में मिल जाये लेकिन ऐसा नहीं हुआ। चाय, पानी तो मिल गया था लेकिन खाना नहीं। सारे दिन समुदाय में घूमने के बाद थकान हो गई। लस्त–पस्त पैदल–पैदल वापस आए।

स्कूल में दाल, रोटी बनायी और खायी। अब रात को फिर से वहीं सोने की चिंता। क्योंकि नींद तो नीचे डर के मारे आती ही नहीं थी। हमने विचार किया कि नीचे तो नींद नहीं आती है, जानवरों का डर है। ऐसा करते हैं ऊपर टापरी पर सोते हैं।

'कैसे सोयेंगे, कहीं ऊपर से गिर गये तो? लेकिन विजयसिंहजी व ब्रदीजी हिम्मत दिखाते हैं। ऊपर ओढने व बिछाने की चटाइयाँ ले जाते हैं। एक चटाई नीचे बिछाते हैं और हम आड़े सो जाते हैं। यह भी पहला अनुभव था। गिरने क डर भी सता रहा था। लेकिन पहले दिन सोये ही नहीं थे तो नींद के झोंके तो सभी को आ रहे थे। आज नींद को हमसे खास संकोच नहीं हो रहा था। न कोई डर सता रहा था। जो होगा देखा जायेगा। ठंडी हवा के कारण नींद आने लगी। कोई घंटा दो घंटा तो सोये ही होंगे कि बहुत तेज बरसात आ गई। बरसात के साथ हवा भी तेज थी। हम चारों नीचे आते हैं और बक्से पर बैठ जाते हैं। अब धीरे–धीरे टापरी भी टपकने लगी। पहले एक जगह, फिर दूसरी, तीसरी, चौथी, पाँचवीं, छठी जगह, फिर पूरी टापरी ही टपकने लगी। टापरी में पानी ही पानी हो गया। हम भीग रहे थे। हमने चटाइयाँ ओढ़ीं लेकिन अब तो चटाइयों में भी पानी घुस गया। हम सभी पूरे भीग गये। हमने चटाइयाँ वापस हटा दीं। तेज हवा के कारण सर्दी लगने लगी। हमारे कपड़े, हमारे थैले, सभी भीग गये। कहीं जा भी नहीं सकते थे। उसी बरसात में सारी रात हमने एक बक्से पर बैठकर गुजार दी।

आगे के दिनों में भी ऐसी ही परिस्थितियों से गुजरना था। समय से खाना नहीं मिलने और जो मिल. ता, वह सूखी रोटी, दाल व आलू के अलावा कुछ भी नहीं था। स्कूल पर हम रुकते थे जहाँ मच्छरों का आतंक था। मुझे जुलाई माह में मलेरिया हो गया। कैसे न होता! दस–पन्द्रह दिन में मैं गाँव आ गया।

जब ठीक हुआ तो वापस फरिया जाने की सोच भी रहा था। अब मेरे दो मन हो रहे थे कि जाऊँ या नहीं? शायद मैं नहीं कर पाऊँगा, बहुत सारी परेशानियाँ है लेकिन इधर से विजयसिंहजी व वेणी जी ने मुझे हिम्मत बँधाकर बुला ही लिया। अब हमें कमरा लेना ही था। ताकि जिंदगी को व्यवस्थित चलाया जा सके।

फरिया में कमरा लेना वैसे तो कोई बड़ी बात नहीं थी क्योंकि अब सम्पर्क के दौरान हमारी लोग से मुलाकात होती गई। लोग भी हमें जानने लगे। हम कमरे को लेकर बात करने लगे। लेकिन संस्था में यह तय था कि जिन गाँवों से बच्चे आयेंगे वहाँ के प्रत्येक गाँव में किसी न किसी शिक्षक का रहना जरूरी है। फरिया गाँव में दो शिक्षिकायें रह रही थी। यह उनके लिए सुविधाजनक भी था। अब हमें कटार, गोपालपुरा, रायखेड़ा में से किसी गाँव को चुनना था। यहाँ हमें कमरा मिलना मुश्किल हो रहा था क्योंकि समुदाय में लोगों के पास अतिरिक्त कमरे थे ही नहीं। संस्था का कहना था कि आपको तो इन गाँवों में ही रहना है, चाहे कैसे भी रहो। यह एक तरह का फरमान था। अब हमारे सामने फिर संकट आ गया कि कमरे के बिना तो कुछ हो ही नहीं सकता था। न तो ठीक से बच्चों के साथ काम होता था न ही स्वास्थ्य ठीक रहता था। रंजीता जी ने कुछ समय के लिए हमें फरिया में कमरा लेने की अनुमति दे दी।एक रात उदय फरिया के कैम्पस में मैं और शाला सहायक बद्रीजी सो रहे थे। उस समय तक एक टॉयलेट बन गया था। हम दोनों जानवरों व कीड़ों के डर के कारण टॉयलेट के ऊपर सो रहे थे।

टॉयलेट के पीछे खाळ (नाला) बहता था, जिससे होकर बरसात का पानी जाता था। एक दिन आधी रात को नाले में कुछ आवाज सी सुनाई दे रही थी। मैंने बद्रीजी को उठाया और कहा–'आपको भी कुछ सुनाई दे रहा है?'

बद्रीजी ने ध्यान से सुना फिर बोले– 'पास के नाले में कुछ चबाने की सी आवाज आ रही है।' उन्होंने नाले की ओर टॉर्च की रोशनी फेंकी। 'टाइगर है!' तुरंत दोनों संभल जाते हैं। मैं तो थोड़ा घबरा गया। बद्रीजी बोले–'हमारे कैम्पस के चारों ओर काँटों की बाड़ लगी हुई है। टाइगर अंदर नहीं आ सकता इसलिए घबराने की कोई जरूरत नहीं है।'

अब नींद उड़ चुकी थी। कुछ देर बाद रात में भैंस चराने वाले आने लगे। बद्रीजी ने आवाज देकर चरवाहों को कहा कि सतर्क होकर आना। नाले में टाइगर है। भैंसों के साथ दस–पन्द्रह चरवाहे थे। उन्होंने जैसे ही हल्ला किया टाइगर जंगल की ओर भाग गया। इसके बाद मुझे नींद सी आने लगी। अब ऐसी स्थितियाँ तो आये दिन होती ही रहती थी। इन परिस्थतियों से सामना करते–करते डर खत्म होता जा रहा था। केवल सतर्कता की जरूरत थी। बच्चों के साथ शिक्षण के कामों को करते हुए और किसी तरफ ध्यान जाता भी नहीं था।

अशोक कुमार शर्मा, ग्रामीण शिक्षा केन्द्र, सवाईमाधोपुर।

बात लै चीत लै

जाल

किसी गाँव में एक किसान ने तीन लड़कियों की सगाई कर दी। सगाई के बाद दो की शादी भी कर दी। तीसरी की अभी उमर कम थी। इसलिए शादी नहीं की। हालाँकि छह महीने बाद उसकी भी शादी की उमर और शादी, दोनों ही बातें होने वाली थी। लेकिन इससे पहले ही एक दिन लड़की के पिता का पैर मोटरसाकिल के साइलेंसर से जल गया। इस जले की दवा लड़की की ससुराल में मिलती थी। लड़की के होने वाले ससुर खुद ही ये दवा बनाकर देते थे। लड़की के पिता ने कहा–'बेटी दवा तो तेरे ससुराल में मिलती है। मेरे कोई बेटा होता तो जाकर ले आता।'
लड़की ने कहा–'पिताजी आपने बेटे की अच्छी बात की। बेटी के होते अच्छी चिन्ता की। जिस मोटर साइकिल से आपका पैर जला है, मैं वहीं मोटरसाकिल लेकर जाती हूँ और दवा लेकर आ जाती हूँ।'
पिता बोले–'बेटी हमारे यहाँ शादी से पहले लड़की ससुराल नहीं जाती।'
'उसकी चिन्ता आप छोड़ दीजिए। दवा लानी है। इसमें शादी वादी, लड़का लड़की क्या करेगा।'
लड़की ने कपड़े बदले। सलवार सूट की जगह, जीन्स शर्ट पहन ली। गले में लम्बा गमछा डाल लिया। इसके बाद तो उसकी मोटरसाइकिल ससुराल में ही जाकर रुकी। उतरते ही उसने अपने ससुर से हाथ जोड़कर कहा–'राम राम साब।'
'राम राम साब।' ससुर ने अजनबीयत से कहा।
बातचीत में लड़की ने दवा की बात बता दी। जिसे ससुर ने तुरन्त ही मान ली। क्योंकि उसका तो काम ही दवा करना था। लेकिन रात गहराने लगी। ससुर ने उस मेहमान से कहा–'आप रात रुकोगे कि जाओगे।'
'आप कहते हैं तो रुक जाते हैं।' लड़की ने कहा।
यह सुनकर ससुर अंदर चले गए। जाकर उन्होंने अपनी पत्नी यानी लड़की की होने वाली सास से पूछा–'दवा लेने आया मेहमान लगता तो आदमी है। पर कभी–कभी लगता है ऐसा नहीं है।'
'ऐसा ही कुछ मुझे भी लग रहा है।' होनेवाली सास बोली।
'चलो खैर तुम छत पर जाकर खाना बनाओ। मैं सीढ़ियों पर मूँग बिखेर देता हूँ। लड़की हुई तो फिसल कर गिर जाएगी। लड़का हुआ तो आसानी से ऊपर आ जाएगा।' ससुर पुराने खयालों वाला आदमी था। सास भी ऐसी ही थी।
मूँग बिखेर कर उसे खाने पर बुलाया।
'यह क्या आपने सीढ़ियों पर मूँग ही मूँग फैला रखा है। किसी को इस रास्ते से बुलाकर फिसला. कर गिराने का इरादा है क्या?' लड़की ने आसानी से सीढ़ियाँ चढ़ते हुए कहा।
ससुर तो चकित ही रह गया। लड़की ने जाल में फँसने के बजाय जाल को ही काट दिया।
अगली सुबह लड़की दवा लेकर घर पहुँच गई। उसके पिता को तो विश्वास ही नहीं हुआ।

लोककथा का स्रोत– फतेह सिंह गुर्जर, कक्षा–6, उदय सामुदायिक पाठशाला गिरिराजपुरा।
पुनर्लेखन – प्रभात

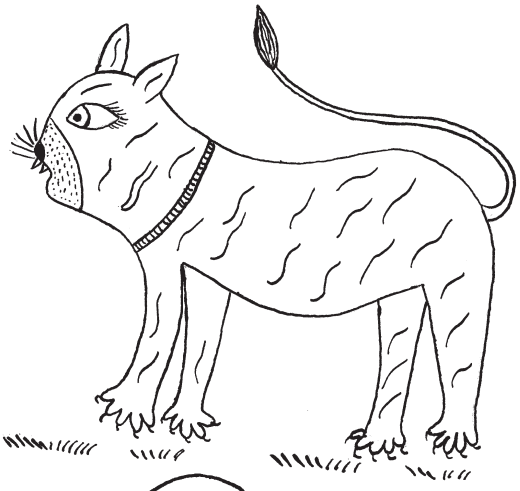

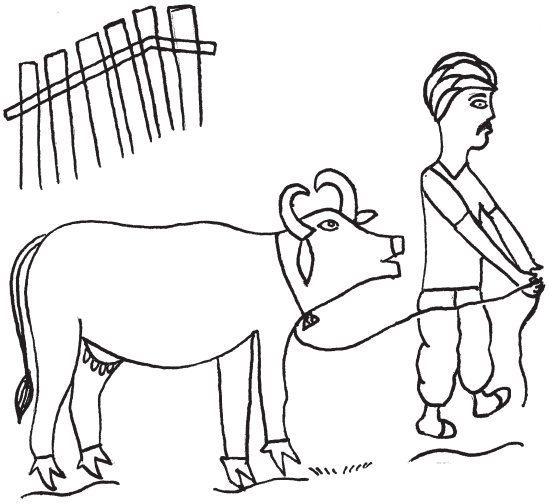

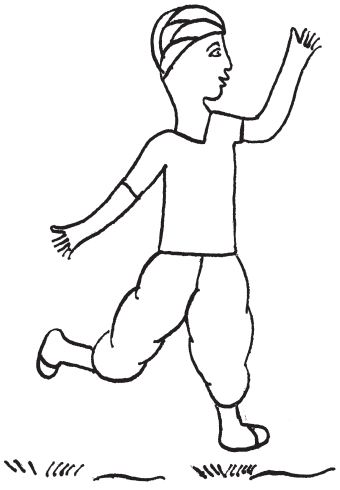

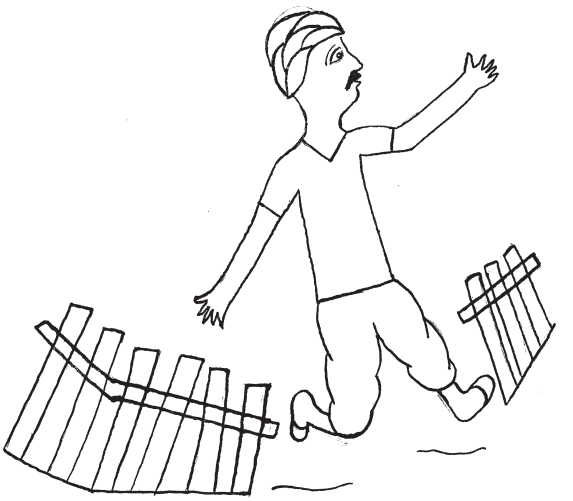

गतिविधि :

इस चित्र को ध्यान में रखते हुए कोई एक कहानी लिखो और मोरंगे को भेजो।

(चित्रः सुनीता)

ऊँची नीची है डगरिया

ऊँची नीची है डगरिया
सर पे है कारी बदरिया
साथी धीरे चलो
साथी धीरे चलो

बारिश की बूँदें
ठण्डी बयरिया
मन को है भाती
बदरिया गगरिया
साथी धीरे चलो
साथी धीरे चलो

बरगद की छँइयाँ
नीमों की बँइयाँ
पोखर के पानी में
कागज की नइयाँ
साथी धीरे चलो
साथी धीरे चलो

लकड़ी की गाड़ी
मिट्टी की गुड़िया
मन को है भाती
गाती कोयलिया
साथी धीरे चलो
साथी धीरे चलो

जगदीश कोली